कर्नाटक में हार के साथ शुरू हो सकता है दक्षिण भारत से BJP के निकलने का सिलसिला, तय करेगा 2024 का रोडमैप

यह सिर्फ कर्नाटक के बारे में नहीं है. राज्य में राजनीतिक मुकाबला हमारे गणतंत्र को फिर से प्राप्त करने की लड़ाई की दिशा और दशा तय करेगा.

योगेन्द्र यादव

आगामी 10 मई को कर्नाटक में विधानसभा के चुनाव होंगे लेकिन इस सूचना में खास क्या है? यह एक आधिकारिक घोषणा है, इससे असल बात का पता नहीं चलता. असल बात यह है कि कर्नाटक विधानसभा के लिए होने जा रहा चुनाव आम ढर्रे पर होने जा रहा चुनाव-मात्र नहीं है. इस चुनाव से इतना ही भर नहीं पता चलता कि राज्य में अगले पांच सालों के लिए कौन शासन करने जा रहा है. और, इस चुनाव की अहमियत सिर्फ कर्नाटक की राजनीतिक नियति तक सीमित नहीं. दरअसल, कर्नाटक में होने जा रहा राजनीतिक मुकाबला तय करेगा कि भारत नाम के गणराज्य को फिर से हासिल करने की लड़ाई क्या रुख और रंग लेने जा रही है.

इसका मतलब यह कतई नहीं कि यहां किसी फुर्सतिया की तरह चुनावी-चर्चाओं में अक्सर कही जाने वाली बात को दोहराया भर जा रहा है– इतना भर कहा जा रहा है कि लोकसभा चुनाव से ऐन पहले होने के कारण कर्नाटक विधानसभा के चुनाव किसी सेमी-फाइनल मुकाबले की तरह हैं. यह तो जाहिर सी बात है कि दक्षिण भारत का मंझोले से आकार का यह राज्य लोकसभा के लिए होने जा रहे चुनावी मुकाबले की तासीर तय नहीं कर सकता और न ही इस राज्य को पैमाना मानकर ये जाना सकता है कि जिन इलाकों में बीजेपी को झोली भर-भर कर लोकसभा की सीटें मिलती हैं यानी उत्तर भारत और पश्चिम भारत, वहां जनता-जनार्दन के मन में क्या चल रहा है.

यह कहना कहीं ज्यादा संगत होगा कि दिसंबर में मध्यप्रदेश, राजस्थान और छत्तीसगढ़ में चुनावी मुकाबले में जो कुछ होगा, उसका लोकसभा के चुनावों पर कहीं ज्यादा असर होने जा रहा है बनिस्बत कर्नाटक विधानसभा चुनाव के क्योंकि कर्नाटक के विधानसभा चुनाव और लोकसभा चुनाव के बीच अभी एक साल का फासला है. फिर भी, कर्नाटक में होने जा रहा राजनीतिक मुकाबला अगले साल का सियासी मानचित्र तय करने में निर्णायक भूमिका निभायेगा.

बीजेपीः सत्ता और सत्ता की वैधता बनाये रखने की चुनौती

बीजेपी के लिए कर्नाटक का चुनाव अपने वर्चस्व को साबित करने की लड़ाई है–यह साबित करने की लड़ाई कि अपनी ताकत में वह अपराजेय है और उसकी ताकत का सिक्का अब भी लोगों के बीच जमकर चल रहा है. लोकसभा की सीटों के लिहाज से देखें तो कर्नाटक बीजेपी के लिए बड़ा मायने रखता है. जैसा कि मैंने पहले भी लिखा है, बीजेपी अपनी प्रभुताई वाले इलाकों में सीटों के मामले में अपने चरम पर पहुंच चुकी है.

साल 2024 में सत्ताधारी पार्टी को कई राज्यों में सीटों का घाटा उठाना होगा और इस घाटे की भरपाई के लिए उसके पास शायद ही कोई जगह बची है. कर्नाटक में पार्टी के हाथ से अगर 2019 में जीती अपनी कुल 26 सीटों (जिसमें बीजेपी समर्थित एक निर्दलीय भी शामिल है) में से आधी भी फिसल जाये तो देश में ऐसी कोई जगह नहीं (एक तेलंगाना को छोड़कर) जहां वह अभी की अपनी सीटों में बढ़ोत्तरी करके कर्नाटक में हुए नुकसान की भरपायी कर सके. मतलब, पार्टी को कर्नाटक पर अपनी पकड़ बनाये रखनी होगी.

जहां तक किसी पार्टी की प्रभुताई का सवाल है तो वह सिर्फ सीटों की कमी-बेशी तक सीमित नहीं. बीजेपी ने अपने इर्द-गिर्द ऐसा प्रभामंडल बना लिया है मानो वह अपराजेय हो और ऐसे प्रभामंडल के साथ पार्टी कोई बड़ा चुनाव हारने का जोखिम नहीं मोल सकती–खासकर एक ऐसे राज्य में जहां वह सत्ता में है.

र्नाटक में बीजेपी के सामने दोहरी मुश्किल है क्योंकि एक तो बोम्मई के नेतृत्व वाली सरकार को सूबे में बहुतायत लोग भ्रष्ट और नकारा मानते हैं, साथ ही धुर सांप्रदायिक भी. `40 प्रतिशत की सरकार` अभियान की सफलता इस बात का प्रमाण है कि सूबे की बोम्मई सरकार की हैसियत लोगों की नजर में क्या रह गई है. यह अभियान राजकीय ठेकेदार संघ की तरफ से चलाया गया और इसमें सरकार का यह कहते हुए विरोध किया गया कि बुनियादी ढांचे के निर्माण की किसी भी परियोजना में 40 प्रतिशत का नजराना वसूला जा रहा है. फिर भी, बीजेपी के नेतृवर्ग को लगता है कि वह सरकार की `मलिन छवि` के मसले को सामाजिक इंजीनियरिंग, सांप्रदायिक गोलबंदी और धनवर्षा करके सुलझा लेगी. बीजेपी को पता है कि राज्य में दांव कितना बड़ा लगा है. प्रधानमंत्री चुनावों की घोषणा से पहले सात बार कर्नाटक का दौरा कर चुके हैं.

कर्नाटक में बीजेपी के सामने अपने शासन की वैधता का भी सवाल है. बेशक, पार्टी इस राज्य में कई बार सत्तासीन हुई लेकिन उसे सूबे की विधानसभा के किसी भी चुनाव में इतनी सीटें नहीं मिलीं कि वह अपने दम पर बहुमत की सरकार बना सके. लेकिन, अबकी बार उसे ऐसा करना ही होगा ताकि वह बहुमत जुटाने की अपनी `ऑपरेशन कमल` सरीखी

कई ओछी कोशिशों से पीछा छुड़ा सके. बीजेपी के लिए कर्नाटक दक्षिण भारत का प्रवेश-द्वारा बना और पार्टी ने इसे एक मौके के रूप में देखा-दिखाया जिसके सहारे वह वह अपने ऊपर `उत्तर भारत की पार्टी` होने का लगा ठप्पा हटा सकती थी.

बीजेपी को कर्नाटक में शुरुआती सफलता आडवाणी की रथयात्रा से ऊपजे माहौल में मिली थी. इसके तीन दशक बाद भी पार्टी के लिए प्रतीक्षा की घड़ियां खत्म नहीं हुई हैं, उसे यह इंतजार लगा हुआ है कि सूबे में बहुमत से सीटें मिलें तो वह दक्षिण भारत के अन्य राज्यों में भी पैर जमाने की सोचे. बीजेपी ने अपने शासन को जायज ठहराने के लिए खुलेआम सांप्रदायिक तेवर दिखाये हैं. अब उसे साबित करना होगा कि हिजाब और अजान जैसे मुद्दे राजकाज और लोगों की आर्थिक बदहाली के रोजमर्रा के सवालों को ढंकने-दबाने के लिए काफी हैं.

कांग्रेसः क्या हैं चुनौतियां और दांव पर क्या लगा है

कर्नाटक में कांग्रेस के लिए दांव ऊंचे हैं. कर्नाटक उन चंद राज्यों में से एक है जहां पार्टी अब भी जमी हुई है, जहां उसके पास व्यापक जन-समर्थन वाले नेता हैं और जहां हर गली-नुक्कड़ पर उसके कार्यकर्ता मिल जायेंगे. पार्टी के नये अध्यक्ष कर्नाटक के ही हैं सो चुनावी मुकाबले में यह बात पार्टी के लिए और भी प्रतिष्ठा की बात है. अगर कांग्रेस सूबे में बीजेपी के कमजोर नेतृत्व को परास्त नहीं कर पाती तो शेष भारत में अपनी राजनीतिक जमीन फिर से हासिल करने की उसकी क्षमता पर प्रश्न-चिह्न खड़े होंगे.

कर्नाटक वह राज्य है जहां इमर्जेंसी के बाद के दौर में भी कांग्रेस ने झोली भर-भर के सीटें बटोरीं थीं और ऐसे राज्य में अगर वह लोकसभा सीटों की मौजूदा संख्या (केवल एक सीट) में अच्छा-खासा इजाफा नहीं कर पाती तो इस दावे पर टिका रहना मुश्किल होगा कि कांग्रेस फिर से उभार पर है.

कांग्रेस की जरूरत है कि वह हर हाल में इस चुनाव को जीते. महाराष्ट्र में सत्ता से बेदखल होने के बाद संसाधनों की कमी झेल रहे विपक्ष के लिए बड़ा जरूरी है कि वह कम से कम एक धनी राज्य में सत्ता पर काबिज हो– एक ऐसा राज्य जहां के धन्नासेठों को विपक्षी पार्टियों के लिए धन खर्चने की बात पर काठ न मार जाता हो. फिलहाल, कर्नाटक ही ऐसा एकमात्र विकल्प है. राजनीतिक मुहावरे में कहें तो कर्नाटक में कांग्रेस के पुनरूत्थान की जांच-परीक्षा होनी है.

भारत जोड़ो यात्रा की व्यापक सराहना के बीच अक्सर पूछा जाता था किः क्या यात्रा को मिला जन-समर्थन वोटों में तब्दील हो पायेगा? क्या कांग्रेस इसी गति के साथ आगे भी चलती रहेगी ? क्या राहुल गांधी ने अपने को जैसे यात्रा में खपाया और तपाया है उसी तरह वे अपने को चुनाव-अभियान में झोंक पायेंगे ? पूर्वोत्तर के राज्यों में हुए विधानसभा चुनाव कांग्रेस के पुनरूत्थान की परीक्षा नहीं थे. लेकिन, कर्नाटक को अपवाद नहीं माना जा सकता. एक ऐसे समय में तो बिल्कुल ही नहीं जब राहुल गांधी ने मोदाणी से आमने-सामने की जंग छेड़ रखी है और उन्हें सांसदी से बेदखल कर दिया गया है. युद्ध की रेखाएं अब खिंच गई हैं. और, चाहे ऐसा सचेत रूप से हुआ हो या फिर अनायास ही लेकिन कर्नाटक युद्धभूमि बन चुका है.

कांग्रेस के सामने बहुविध चुनौतियां हैं. बीजेपी को हल्की-फुल्की पटखनी देने से काम नहीं चलने वाला. जनता दल (सेक्युलर) के पिछले रिकॉर्ड को देखते हुए कहा जा सकता है कि त्रिशंकु विधानसभा की स्थिति बनी तो कर्नाटक में बीजेपी की सरकार बनेगी या फिर जेडीएस का एक ऐसा नेता मुख्यमंत्री बनेगा जिसे बीजेपी कठपुतली की तरह नचायेगी. कांग्रेस को स्पष्ट और दमदार बहुमत हासिल करना होगा, उसे 224-सीटों वाली विधानसभा में कम से कम 125 सीटें हासिल करनी होगी ताकि बीजेपी-जेडीएस गठबंधन या फिर ऑपरेशन कमला सरीखी किसी आशंका को दूर भगाया जा सके.

ये देखते हुए कि कर्नाटक में बीजेपी को हासिल वोटों की तुलना में कहीं ज्यादा सीटें हाथ लग जाती हैं (पिछली बार बीजेपी को कांग्रेस से दो प्रतिशत कम वोट मिले थे लेकिन उसने कांग्रेस की तुलना में 24 सीटें ज्यादा जीती थीं), कांग्रेस को वोटों के मामले में बीजेपी पर कम से कम 6 प्रतिशत की बढ़त बनानी होगी. हाल के चुनाव-सर्वेक्षण के नतीजों में कांग्रेस को जितने वोट मिलते बताया गया है, यह उससे कहीं ज्यादा है. कांग्रेस स्थिति को तयशुदा मानकर नहीं चल सकती. उसे अगले छह हफ्तों में चीजों पर पूरा दमखम लगाना होगा.

कांग्रेस ने खूब सोच-समझकर गढ़े चार चुनावों वादों के सहारे एक अच्छी शुरूआत की है. ये चुनावी वादे हैः गृह-ज्योति (200 यूनिट मुफ्त बिजली), गृह-लक्ष्मी (घर के महिला-प्रधान को 2000 रूपये प्रतिमाह), अन्न-भाग्य (बीपीएल कार्डधारी परिवारों को 10 किलो चावल प्रतिमाह) तथा युवा-निधि (स्नातक डिग्रीधारी बेरोजगार युवकों को 3,000 रूपये प्रतिमाह). कांग्रेस चाहे तो इसमें कुछ किसानों के लिए भी जोड़ सकती है, ज्यादा सही तो यही होगा कि वह किसानों की न्यूनतम् समर्थन मूल्य की गारंटी की मांग को अपने चुनावी वादे में स्थान दे. चुनावी मुकाबले के आखिरी क्षणों में बीजेपी ने दो प्रभावशाली समुदाय– लिंगायत और वोक्कलिगा को 2 प्रतिशत अतिरिक्त आरक्षण देने की घोषणा की है और बीजेपी के इस दांव की काट का तरीका कांग्रेस को निकालना होगा.

कांग्रेस के लिए जरूरी है कि वह कर्नाटक के सामाजिक-पिरामिड के निचले हिस्से में मौजूद दो तिहाई हिस्से यानी ओबीसी, एससी तथा एसटी तथा अल्पसंख्यकों को अपने पक्ष में जोरदार तरीके से लामबंद करे. कांग्रेस मुस्लिम मतदाता को अपने पक्ष में गारंटीशुदा मानकर नहीं चल सकती क्योंकि एक तो मुस्लिम वोटों के दावेदार के रूप में जेडीएस मौजूद है, दूसरे एआईएमआईएम तथा एसडीपीआई के चुनावी मुकाबले में होने से मुस्लिम वोट इनके बीच बंट सकते हैं. साथ ही, मुस्लिम मतदाताओं का मन इस ख्याल से भी खिंचा हो सकता है कि पिछले चुनाव में कांग्रेस के निर्वाचित विधायकों ने बड़ी बेहयाई से पाला बदलते हुए बीजेपी का दामन थाम लिया था. कांग्रेस को अपनी अंदरूनी खींचतान से भी उबरना होगा.

भारत जोड़ो यात्रा के हासिल को बनाये रखने और उसकी नींव पर नव-निर्माण करने के लिए राहुल गांधी को कर्नाटक में जोरदार ढंग से हस्तक्षेप करना चाहिए.

सकारात्मक राजनीति

यह चुनाव नागरिक-समाज के लिए परीक्षा की घड़ी साबित होने जा रहा है. पहली बार हुआ है कि नागरिक-समाज का एक बड़ा हिस्सा जिसमें किसानों, दलितों तथा अल्पसंख्यकों के साथ ही साथ लोकतंत्र और सेक्युलरवाद के समर्थक संगठन तथा बुद्धिजीवी शामिल हैं–येद्देलू कर्नाटका (जाग! कर्नाटक जाग!) के झंडे तले आगामी चुनाव में हस्तक्षेप के लिए एकजुट हुए हैं ताकि बीजेपी की हार सुनिश्चित की जा सके. (भारत जोड़ो अभियान तथा स्वराज इंडिया, जिनसे मेरा जुड़ाव है– इस पहल में शामिल हैं).

ऐसा पहली बार देखने को मिल रहा है जब इन संगठनों ने फैसला किया है कि अपने को बयान जारी करने और चंदेक सार्वजनिक बैठक करने तक सीमित नहीं रखना बल्कि इसके आगे जाना है. इन नागरिक-संगठनों ने एक योजना बनायी है कि विधानसभाई चुनाव के चुनिन्दा जगहों पर अपने कार्यकर्ता बहाल करने हैं जो लोगों को असली मुद्दों के बारे में आगाह करें और आरएसएस-बीजेपी के झूठ का पर्दाफाश करें. और, इन संगठनों ने यह भी तय किया है कि सिर्फ बीजेपी का विरोध ही नहीं करना बल्कि बीजेपी को हराने का माद्दा रखने वाले उम्मीदवार को समर्थन भी देना है.

तो फिर, यों समझिए कि 13 मई को हम सिर्फ चुनावी मुकाबले के नतीजों को ही नहीं देख रहे होंगे. मौजूदा सरकार के होते, कोई भी चुनाव केवल चुनाव भर नहीं रह गया बल्कि झूठ और नफरत की इसकी राजनीति की लोक-स्वीकृति बन चला है. अगर `चालीस प्रतिशत की सरकार` का ठप्पा बोम्मई सरकार पर चिपका रहता है तो फिर अडाणी मामले में नरेन्द्र मोदी की सरकार पर दबाव बढ़ेगा. अगर कर्नाटक की जनता हिजाब, अजान, लव-जेहाद और

समाज के ठेकेदार बने `नफरती पहरेदारों` के दम पर बुनी गई कट्टरतावाद की राजनीति को जोरदार तरीके से नकार देती है तो 2024 के लिए सकारात्मक राजनीति का रास्ता खुलेगा.

कर्नाटक में बीजेपी की निर्णायक हार के साथ दक्षिण भारत से उसकी वापसी की शुरूआत हो सकती है. इससे भी ज्यादा अहम बात यह कि बीजेपी की हार से सड़कों और गलियों में लोकतांत्रिक दायरों पर दावा कायम रखने की चलने वाली वह लड़ाई और तेज होगी जिसकी शुरूआत राहुल गांधी को सांसदी को अयोग्य करार देने से हुई है. इससे साल 2024 के राजनीतिक मुकाबले का मानचित्र तैयार होगा. मतलब, कर्नाटक विधानसभा में दांव बहुत ऊंचे लगे हैं.